प्रकाशकीय निवेदन

पाठको ! इस पुस्तकका नाम "श्रावकाचारकी सच्ची कहानियाँ" इसलिये रखा गया है कि श्रीरत्न-करन्ड श्रावकाचारके संस्कृत टीकाकार श्रीप्रभा-चन्द्राचार्यजीने जो जैन कथा द्वाविंशति संस्कृतमें लिखी थी, उसका यह हूबहू अविकल अनुवाद है। हमने पं० भुवनेन्द्रजी "विश्व" से यह अनु-वाद कराके प्रकाशित कराया है। पुस्तकका कलेवर छोटा है, इससे तमाम कथाओंके चित्र अंकित नहीं हो सके। फिर भी जिन महत्वपूर्ण दृश्योंको अंकित कराया है उससे पुस्तककी उप-योगिता बहुत कुछ बढ़ जाती है। आशा है हमारे सहृदय पाठक इसे अपनाकर मुझे आभारी करेंगे ताकि भविष्यमें और भी कोई नवीन चीज तैयार करनेका साहस कर सकूं।

देवरी (सागर) निवासी। } विनीत— दुलीचन्द परवार,

विषय सूची ।

स्वाध्याय प्रेमी इसे अवश्य पढ़ें

(तमाम ग्रन्थ सरल भाषामें हैं)

ग्रन्थ	मूल्य
पद्मपुराणजी	१०)
हरिवंश पुराण	८)
सुदृष्टि तरंगनी	७॥)
आदिपुराण	६)
बृहद् विमलपुराण	६)
तत्वार्थ राजवार्तिक	५)
रत्नकरन्ड श्रावकाचार	५॥)
शांतिनाथ पुराण	६)
मल्लिनाथ पुराण	४)
पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय	४)
चरचा समाधान	२)
जैनक्रियाकोष	३)
जैनव्रत कथाकोष	२॥)
बड़ा पूजाविधान संग्रह	२॥)
भक्तामर कथा मंत्र यंत्र	१॥)
जैन भारती	१॥)
षोड़शसंस्कार	॥)
बृन्दवन चौबीसी पाठ	१)
रामवनवास	१)
रामचन्द्र चौबीसी पाठ	१)
भाद्रपद पूजा संग्रह	॥=)
सरल नित्यपाठ संग्रह	॥)
नित्यपाठ गुटका	॥)
शीलकथा (सचित्र)	।=)
दर्शन कथा ,,	॥)
दान कथा ,,	।)
निशिभोजन कथा ,,	।)
मौनव्रत कथा ,,	।)
दौलतजैनपद संग्रह १२५ भजन	॥)
द्यानतजैनपद	।-)
भागचन्द भजन	।)
जिनेश्वरपद संग्रह	।-)
महाचन्द भजन	।)
जैनव्रत कथा	=)॥
सुगंध दशमी कथा	-)॥
रविव्रतकथा	-)॥
श्रावकवनिता रागनी (सचित्र)	≡)

ग्रामोफोन मास्टर	१॥)
प्रेम	॥)
दरशव्रत नाटक	।)
तत्वार्थसूत्र भक्तामर महा०	=)
सामायक पाठ सार्थ	-)
इष्टछत्तीसी	-)
नित्यपूजा	=)
सम्मेदाचल गायन	-)॥
मेरी भावना	)॥
सज्जन चित्तवल्लभ	≡)
अरहन्त पासाकेवली	-)॥
निर्वाण कांड आलोचना सामायक	-)
विनती संग्रह (सचित्र)	-)॥
पंचमंगल	-)
त्रिमुनिपूजन	=)
समाधिमरण	-)
चौवीस दंडक	-)
भक्तामर संकट हरण	-)
आदर्श नाटक	=)
कर्मदहन विधान	=)
पंचपरमेष्ठी विधान	=)

पंचकल्याणक विधान	=)
प्रद्युम्न चरित्र	॥)
बिगड़ेका सुधार	=)
भावना संग्रह	=)
प्रेमतरंग प्रथम भाग	-)
,, द्वितीय भाग	-)
पोपोंकी कहानियां	॥)
जैनधर्म शिक्षावली	-)
तीर्थङ्कर चित्रावली	३)
सच्चा जिनवाणी संग्रह	३)
दर्शनपाठ	-)
भाग्य उद्योग	॥)
संसार दुःखदर्पण	-)
द्यानतप्रद	।-)
विजातीय विवाह मीमांसा	॥=)
तत्काल गणित	।-)
मधुवन	१)
भैयाकी कहानी	।=)
मिठाईका दोना	।=)
जीवंधर नाटक	॥)
मणिभद्र नाटक	॥)
पिंडशुद्धि	=)
धर्म पत्नी और वेश्या	।≡)

अंजन चोर विद्या साधन कर रहा है

श्रावकाचारकी

सच्ची कथायें ।

अङ्ग रहित सम्यग्दर्शनसे होता नहीं कर्म्मदल नाश।
अक्षर हीन मन्त्रसे भी तो होगा कभी नहीं विष नाश॥
इसीलिये निःशङ्कितादिका यथाशक्ति पालन करना।
अञ्जनादि जैसे बन कर्मठ मुक्ति रमा का पद वरना॥

(प्रथम निःशङ्कित अङ्गमें)

अंजन चोर ।
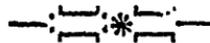
मगधदेशके राजगृह नगरमें जिनदत्त नामका सेठ रहता था। वह उपवास कर कृष्णपक्षकी चतुर्दशीको रात्रिके समय श्मशानमें कायोत्सर्ग धारण किये हुये था। तब अमितप्रभ देवने कहा कि "मेरे मुनि दूर रहें और इस गृहस्थको ध्यानसे विचलित करें।" उसके बाद विद्युत्प्रभ देवने भी

अनेक प्रकारके उपसर्ग किये किन्तु वह ध्यानसे विचलित नहीं हुआ। इसके बाद प्रातःकाल होने पर मायाका संवरण कर और ध्यानकी प्रशंसा कर सेठको आकाशगामिनी विद्या प्रदान की तथा सेठसे यह कहा कि यह विद्या तुमको सिद्ध हो गई है और जो पञ्च नमस्कार मन्त्रका पूजन और आराधन यथा विधि करेगा उसे भी यह विद्या सिद्ध हो जावेगी। सोमदत्तने एक बार जिनदत्तसे पूछा कि आप प्रातःकाल उठकर प्रतिदिन कहां जाया करते हैं ? सेठने उत्तर दिया कि अकृत्रिम चैत्यालयकी बन्दना एवं भक्तिके लिये जाया करता हूँ। मुझे इससे विद्या सिद्ध हुई है। ऐसा कहनेपर सोमदत्तने कहा कि मुझे ज्ञान दो जिससे तुम्हारे साथ पुष्पादिक लेकर बन्दना एवं भक्ति करूं। पश्चात् सेठने उसे उपदेश दिया। उसने कृष्ण चतुर्दशीको श्मशानमें वट वृक्षकी पूर्वशाखामें घासका सींका बांधा, जिसमें १०८ डोरियां थीं। उसके नीचे अनेक प्रकारके तीक्ष्ण शस्त्रोंका अग्रभाग ऊपरकी ओर रखा। गन्धपुष्पादिकसे पूजाकर वह सींकेमें बैठ गया, छठे उपवाससे पंचनमस्कार मन्त्रका उच्चारण कर छुरीसे एक २

डोरी काटते समय नीचे दमकते हुये शस्त्र देखकर सोमदत्तने भयभीत होकर विचारा कि "यदि सेठका बचन असत्य निकला तो मरण अवश्य हो जावेगा" ऐसा शंकित होकर बार बार चढ़ने उतरने लगा।

इतनेमें प्रजापाल राजाकी कनकरानीके हारको देखकर अञ्जन-चोरकी सुन्दरी वेश्याने रात्रिमें आये हुये अंजन चोरसे कहा कि "यदि तुम मुझे कनक रानीका हार ला दोगे तो तुम मेरे भर्त्ता (पति) हो अन्यथा नहीं।" इसके बाद रात्रिमें हारको चुराकर ज्यों ही भागने लगा वैसे ही हारकी कान्ति (चमक) से अंजन चोर अङ्गरक्षक-कोट वालोंसे पकड़ा गया। लेकिन हारको वहीं छोड़कर स्वयं उनके हाथोंसे छूटकर भाग गया। उसने वटवृक्ष के नीचे सोमदत्तको देखकर उनसे मन्त्र ग्रहण किया और निःशङ्क होकर विधि पूर्वक एक बार सब डोरियां काट डालीं, शस्त्रोंपर गिरने ही वाला था कि विद्या सिद्ध हो गई और विद्याने कहा कि "मुझे आज्ञा दो।"

तब अंजन चोरने जिनदत्त सेठके पास चलने के लिये कहा।

इसके बाद सुदर्शन सेठ चैत्यालयमें जिनदत्त के पास पहुंचा। अपना समस्त वृत्तान्त कहकर बोला कि "जैसे यह विद्या सिद्ध हुई उसी प्रकार परलोक सिद्धिका भी उपदेश दीजिये।" तत्पश्चात् चारण मुनिसे तप ग्रहण कर कैलाश पर्वतपर केवलज्ञान प्राप्त कर, अनन्तचतुष्टयका निधान, नित्य निरंजन मुक्तिपद अंजनने प्राप्त किया। इसीलिये :—

तत्व यही है, ऐसा ही है, अन्य नहीं, नहिं अन्य प्रकार,
यही असंशय रुचि है जैसे, लोहेके पानीकी धार ॥

(द्वितीय निष्कांक्षित अङ्गमें)

अनन्तमती।

अङ्गदेशकी चम्पा नगरीमें राजा वसुवर्धन और रानी लक्ष्मीमती थीं। उसमें सेठ प्रियदत्तकी पत्नी अङ्गवती और पुत्री अनन्तमती रहती थीं। नन्दीश्वरकी अष्टमीके दिन सेठने धर्मकीर्त्ति आचार्यसे आठ दिनके लिये ब्रह्मचर्य धारण किया। क्रीड़ा (हंसी खेल) में अनन्तमतीने भी ब्रह्मचर्यव्रत ले लिया। विवाह कालमें अनन्त-

कुमारी अनन्तमतीके हरणका दृश्य

मूल्य =)

मतीने कहा कि पूज्य पिताजी ! आपने ही मुझे ब्रह्मचर्य्यव्रत दिलाया है इसलिये विवाहसे क्या प्रयोजन ?

पिताने कहा पुत्री ! मैंने तुम्हें हंसी खेलमें ब्रह्मचर्य्यव्रत दिलाया था।

पूज्य पिताजी, धर्म्ममें कैसा हँसी खेल ?

पुत्री, मैंने तुम्हें नन्दीश्वर पर्वके आठ दिनका ही व्रत दिलाया था सर्वदाके लिये नहीं ।

नहीं पिताजी, ऐसा आचार्य महाराजका आशय नहीं है। अतएव इस जन्ममें मैं विवाहका त्याग कर चुकी हूँ।

बादमें अनन्तमतीने सम्पूर्ण कलाओं और विद्याओंका अध्ययन किया।

एक बार वह चैत्र मासके दिनोंमें. अपने उपवन में क्रीड़ाकर रही थी। उस समय विजयार्ध दक्षिण श्रेणीके किन्नरपुरके कुण्डल कुंडित नामक विद्याधर सुकेशी नामक पत्नीके साथ विमानमें बैठा जा रहा था। उपवनमें अनन्तमतीको देखकर मंत्र-मुग्धसा हो गया और विचारने लगा कि "मेरा इसके बिना जीवन निष्फल है।" ऐसा सोच कर पत्नीको घर छोड़ आया और विलाप करती हुई

अनन्तमतीको बलात्कार ले गया। आकाश मार्ग से अपनी पत्नीको अचानक आता देख अनन्तमतीको रोते हुये लघुपर्णविद्याको सौंप कर महाटवीमें छोड़ दिया। वहां उसको विलाप करते देखकर भीम नामक भीलोंका राजा अपनी पालकीमें बैठाकर अपने महल ले गया। वहां पहुंच कर उसने अपनी प्रधान रानी बनानेकी अभिलाषा प्रकट की और ऐसा कहते ही बलात्कार करना चाहा कि व्रत माहात्म्यसे वनदेवताने दुष्ट भीमको दे पछाड़ा। यह कोई देवता है, इस भयसे वनदेवताने पुष्पक नामक सेठको अनन्तमती सौंप दी। उसने भी लोभ प्रकट कर परिणयनकी अभिलाषा प्रकट की किन्तु अनन्तमतीने स्वीकार नहीं किया। उसने अयोध्याकी कामसेना नामक वेश्याको समर्पित कर दी उसने वेश्यावृत्तिके लिये अनन्तमतीको बहुत बाध्य किया किन्तु वह अपने व्रतसे विचलित नहीं हुई। इसके बाद सिंहराज राजाने एकान्त देखकर रात्रिमें हठात् कामसेवन करना चाहा किन्तु नगर देवताने व्रतके माहात्म्यसे अनन्तमतीके शीलकी रक्षा की। राजा ने भयभीत होकर घरसे निकाल दिया। रोती २

वह कमलश्री नामक आर्यिकाके पास पहुंची, उन्होंने अनन्तमतीको उत्तम श्राविका समझ कर अपने पास रख लिया।

इसके बाद पुत्री अनन्तमतीके शोकका विस्मरण करनेके लिये प्रियदत्त सेठ वन्दना भक्ति करनेके निमित्त अयोध्या पहुंचे। वहां अपने साले जिनदत्त सेठके घर ठहरे। वे संध्या समय पहुंचे थे। रात्रिमें उन्होंने अपनी पुत्री अनन्तमतीके हरणकी चर्चा की। सेठ प्रातःकाल होनेपर बन्दना भक्ति करनेके लिये चले गये, इतनेमें कमलश्री आर्यिकाके यहांसे अनन्तमतीको आंगनमें रोरी गुलाल आदिसे चौक पूरनेको बुलाया और चौक पूरकर वापिस चली गई। स्नान एवं पूजनादिसे निवृत्त होकर सेठ प्रियदत्त आंगनमें चौकको देख अनन्तमतीका, गहरी सांस लेकर स्मरण करने लगे तथा अश्रुपात करते हुये गद्गद् वचन बोले—"जिसने यह घरकी शोभा बढ़ाई है उसका मुझे दर्शन करा दीजिये।"

इसके बाद पुत्री अनन्तमती और पिता प्रियदत्तकी परस्पर भेंट हुई और जिनदत्त सेठने बड़ा आनन्द मनाया।

पश्चात् पुत्रीने कहा कि पिताजी, अब मुझे तपश्चरण करनेकी आज्ञा दीजिये, मैंने एक ही भवमें संसारकी विचित्रताका अनुभव कर लिया है। तदनन्तर कमलश्री आर्यिकासे तप ग्रहण कर विधिपूर्वक मरण किया और बाल ब्रह्मचारिणी तथा तपस्विनी अनन्तमतीका आत्मा सहस्रार नामक बारहवें स्वर्गमें देव उत्पन्न हुआ। इस कथा में स्पष्ट रूपसे प्रकट किया है कि अनन्तमतीने ब्रह्मचर्यव्रत धारण कर सांसारिक विषय भोगोंसे सर्वथा वैराग्यभाव धारण कर रखा था, उसे अनेक अवसर राज्यादि प्रलोभनके मिले किन्तु अनन्तमतीने उन्हें तुच्छ समझा। मरण पर्यन्त संसार तथा विषय भोगोंसे विरक्त रहनेके कारण उसके दोनों भव सुधर गये। इसलिये :—

सान्त कर्म्मवश, दुख सन्मिश्रित, सांसारिक सुख पाया धार।
विषय वासनाओंको त्यागो, यही अंग निष्कांक्षित सार॥

(तृतीय निर्विचिकित्सित अङ्गमें)

उद्दायन राजा

एक बार सौधर्म इन्द्रने अपनी सभामें सम्यक्त्व गुणका वर्णन किया। भरतक्षेत्रके वत्सदेशमें रौरकपुर नामक नगर था। इसका राजा उद्दायन था। इन्द्र सभामें राजाके सम्यक्त्व गुणकी बहुत प्रशंसा हुई। राजाकी परीक्षा करनेके लिये वासवदेवने दुर्गन्धित कुरूप एवं कुष्ठ गलित शरीर बना लिया। राजाके हाथ विधिपूर्वक आहार तथा जल ग्रहण किया और मायासे भक्षण कर अत्यन्त दुर्गन्ध वमन (कै-उलटी-उकाई) कर दी। दुर्गन्धि के कारण राजा और रानीके सिवाय सब भाग गये। बादमें दान करनेवाले राजा और रानी प्रभावतीके ऊपर भी वमन कर दी। राजाने विचारा कि हाय! हाय!! मैने प्रकृति विरुद्ध आहार कराया है, बहुत अपराध बन पड़ा। इस प्रकार आत्मनिन्दा करते हुये मुनि महाराजके शरीरको अपने हाथसे धोया पोछा। बादमें देवने अपनी मायाका संवरण किया और प्रकट होकर

पूर्व वृत्तान्त सुनाया तथा राजाकी प्रशंसा करते हुये स्वर्ग चला गया। उद्दायन महाराजने श्रीवर्धमान स्वामीके चरणोंमें तपश्चरण ग्रहण किया और मुक्तिपद प्राप्त किया तथा रानी प्रभावतीका आत्मा तपके बलसे ब्रह्मस्वर्गमें देव हुआ। इस लिये :—

तन स्वभावसे अशुचि, निरन्तर मल कारण है मलकी योनि।
पर रत्नत्रयसे पावन कर, निर्विचिकित्सित गुणकी योनि॥

(चतुर्थ अमूढ़ दृष्टि अङ्गमें)

रेवती रानी

विजयार्धकी दक्षिण श्रेणीके मेघकूट नगरमें राजा चन्द्रप्रभ राज्य करता था। वह अपने पुत्र चन्द्रशेखरको राज्य भार देकर परोपकार और वन्दना-भक्तिके लिये अनेक विद्याओंको धारणकर दक्षिण मथुरामें गया तथा गुप्ताचार्यके पास क्षुल्लक हो गया। उत्तर मथुराकी ओर प्रयाण करते समय चन्द्रप्रभ राजाने गुप्ताचार्यसे पूछा कि कोई आपको सन्देश कहना हो तो कहिये।

आचार्यने सुव्रत मुनिको बन्दना और वरुण राज की महारानी रेवतीको आशीर्वाद कह दिया। दुबारा तिबारा भी पूछनेपर भी उन्होंने यही कहा। तब क्षु ल्लकने कहा कि ग्यारह अङ्गके ज्ञाता भव्य-सेन आचार्य आदिका नाम भी नहीं लेते, इसका कोई कारण अवश्य होगा। ऐसा विश्वास कर सुव्रत मुनिकी बन्दना की और उन्होंने क्षु ल्लक के प्रति विशेष अनुराग प्रकट किया। बादमें भव्यसेनकी कुटीको गया। उसने कुछ भी नहीं कहा। कुछ देर बाद भव्यसेन शौचके लिये बाहर चले, कमण्डलु लेकर साथमें क्षु ल्लक भी गये। वहां क्षु ल्लकजीने विद्याके बलसे पृथ्वी हरित तृणमय बना दी। भव्यसेन घास पर ही शौचके लिये बैठ गये। क्षु ल्लकने विद्याबलसे कमन्डलुका पानी सुखा दिया और पासमें ही एक स्वच्छ सरोवर बना दिया। इतनेपर उन्हें किसी तरहकी धर्मग्लानि नहीं मालूम पड़ी और स्वच्छ सरोवर की मृत्तिकासे शुद्धि कर ली (कहीं तालाबके अनछने पानीसे शुद्धि करनेके बावत भी लिखा है)। क्षु ल्लकने उक्त दोनों क्रियाओंको आगम विरुद्ध आचरण करते समय संकेत भी किया था कि

"आगमे किलैतेजीवाः" अर्थात् शास्त्रमें कहा है कि इनमें जीव होते हैं किन्तु उसकी इन कृतियोंको देखकर क्षुल्लकने इनका नाम अभव्यसेन रख दिया और विचार किया कि यह मिथ्या दृष्टी है, इसी लिये गुप्ताचार्यने भव्यसेनकी वन्दना नहीं की थी।

दूसरे दिन पूर्व दिशामें पद्मासनस्थ, चतुर्मुख, यज्ञोपवीत आदि सहित देव राक्षसों द्वारा वन्दनीय ब्रह्मरूप विद्याके बलसे बनाया। वहां राजा आदि और भव्यसेन आदि सब गये। रेवतीको भी लोगोंने वहां जानेके लिये प्रेरणा की किन्तु 'ब्रह्म नामक कौन देव है?' कहकर वह नहीं गई।

इसी प्रकार दक्षिण दिशामें गरुडासीन होकर चार भुजायें धारण कर गदा शंख आदि धारण करनेवाला वासुदेव अर्थात् विष्णुका रूप बनाया।

पश्चिम दिशामें वृषभारूढ़, मस्तक पर जटा जूट धारण करनेवाला, ललाटमें अर्धचन्द्र चिह्नित गौरीगण सहित शंकरका रूप बनाया।

उत्तर दिशामें, समवशरणमें अष्ट प्रातिहार्य सहित, देव मनुष्य विद्याधर और मुनिवृन्दसे वन्दनीय पद्मासनासीन तीर्थंकरका स्वरूप दिखलाया। इन सब रूपोंको देखनेके लिये सब नगर

निवासी गये किन्तु रेवती रानी अनेक बार प्रेरणा करनेपर भीं नहीं गई। उसने विचारा कि वासुदेव नव रुद्र ग्यारह और तीर्थंकर जैन आगममें चौबीस ही कहे गये हैं, तथा ये सब हो चुके हैं, अब कैसे हो सकते हैं यह तो कोई मायावी है।

दूसरे दिन चर्याके समय रोगसे कृश क्षुल्लक का वेष धारण कर रेवती रानीके घरके पासकी गलीमें मायासे मूर्छित हो गिर पड़ा। रेवतीने ऐसा सुनकर उसे भक्तिसे उठाया और उपचार कर स्वस्थ करनेका प्रयत्न करने लगी।

क्षुल्लकने किये हुये भोजनका वमन कर दिया। उसे साफ कर 'हाय! मैंने अपथ्य दिया, उपचारमें कमी रह गई' इस प्रकार रेवतीका वचन सुनकर अपनी मायाका संवरण कर लिया और उस देवीको वन्दना कर "गुरुका आशीर्वाद" तथा पूर्व वृत्तान्त सुनाया।

क्षुल्लकने लोकमें रेवती रानीके अमूढ़ दृष्टि अङ्गकी मुक्त कण्ठसे प्रशंसा की और अपने स्थान को चला गया।

वरुण राजाने शिवकीर्त्ति पुत्रका राज्य सौंप कर तप ग्रहण किया और वह माहेन्द्र स्वर्गमें

देव हुवा। रेवती रानी भी तपकर ब्रह्म स्वर्गमें देव हुई। इसीलिये :—

धर्म्म विमुख पथ और पथास्थित पुरुषोंका नहिं वचनादर।
नहीं काय, मनसे मत सोचो, यही अमूढ़ा दृष्टि प्रवर॥

(पञ्चम उपगूहन अङ्गमें)

जिनेन्द्र भक्तकी कथा

सौराष्ट्र देशके पाटलिपुत्र नगरमें राजा यशोधर, रानी सुसीमा बहुत धर्मपरायण थीं। किन्तु उनका पुत्र सुवीर सप्त व्यसनोंका सेवक था। उसके पास सदा चोर जुवारी वगैरह रहते थे।

पूर्व देशके गौड़ प्रान्तकी ताम्रलिप्त नगरीमें सेठ जिनेन्द्र भक्त रहते थे। उनके मकानके सातवें मंजिल (खण्ड) पर अनेक रक्षकोंसे सुरक्षित पार्श्वनाथकी प्रतिमाके तीनों छत्रोंके ऊपर बहुमूल्य वैडूर्यमणि था। ऐसा जनपरम्परासे सुनकर सुवीरने अपनी मण्डलीसे पूछा कि "कोई वह मणि ला सकता है?" तब सूर्य नामक चोरने अहङ्कार पूर्वक कहा कि "मैं तो इन्द्र मुकुट भी ला सकता हूँ।"

सूर्यने क्षुल्लकका वेष धारण कर लिया और कायक्लेश कर नगरमें क्षोभ मचा दिया तथा क्रमसे ताम्रलिप्त नगरीमें पहुंचा।

सेठजी भी सुनकर कपटी क्षुल्लकके पास गये, उसकी बन्दना की, सम्भाषण किया और प्रशंसा की। सेठने क्षुल्लकको अपने घर ले जाकर पार्श्वनाथ भगवानके दर्शन कराये और उनको मणिका रक्षक नियतकर गये। एक दिन क्षुल्लकसे पूछकर सेठजी समुद्र यात्राके लिये चले और नगरसे बाहर निकल कर ठहर गये। वह चोर क्षुल्लक घर वालोंको काम करनेमें संलग्न जानकर आधी रात्रिमें उस मणिको चुराकर चला गया। मणिकी कान्तिसे पहरेदारोंने उसे चोर समझकर पकड़ लिया। उनके हाथोंसे छूट भागनेमें असमर्थ समझ सेठजीकी ही शरणमें "मेरी रक्षा करो, मेरी रक्षा करो" कहने लगा। कोटपालोंके कोलाहलको सुनकर कि यह चोर है और यह विचार कर कि रहस्य प्रकट करनेसे जैन धमकी निन्दा होगी इसलिये सेठने कहा कि क्षुल्लक यह रत्न मेरे कहनेसे लाया है यह अच्छा नहीं किया कि आप लोगोंने एक महातपस्वीको चोर बनाया। इससे पहरेदारों

को सेठजीके वचनोंपर विश्वास हो गया और उस क्षुल्लक चोरको छोड़ दिया। सेठजीने उसे रातमें ही नगरसे बाहर भगा दिया।

इस प्रकार अन्य सम्यग्दृष्टियोंको भी चाहिये कि वे असमर्थ एवं अज्ञानी पुरुषोंसे बन जानेवाले सम्यग्दर्शनके दोषको ढकनेका निरन्तर प्रयत्न करें। इसीलिये :—

रत्नत्रयसे पावत है पथ, मूढ़, अशक्त जनाश्रित पर।
लगते दोष दूर करना ही, है उपगूहन अङ्ग प्रवर॥

(षष्ठ स्थितीकरण अङ्गमें)

वारिषेण

मगधदेशके राजगृह नगरमें राजा श्रेणिक और रानी चेलिनी थी। उनके पुत्रका नाम वारिषेण था। उन्होंने एक दिन चतुर्दशीकी रात्रिमें उपवास कर श्मशानमें कायोत्सर्ग ध्यान लगाया। उसी दिन उपवनमें मगध सुन्दरी वेश्या गई। उसने श्रीकीर्त्ति नामक सेठानीको दिव्य हार पहिने हुये देखा। हारको देखकर "अलङ्कार बिना जीवन

व्यर्थ है" ऐसा विचार कर शय्या पर गिर पड़ी। रात्रिमें उसका यार विद्युत चोर आया और बोला कि "प्रिये! आज इतनी उदास क्यों हो?" वह बोली कि यदि श्रीकीर्त्ति सेठानीका हार ला दोगे तो मैं जी सकती हूँ, और तभी तुम मेरे स्वामी समझे जाओगे, अन्यथा नहीं। वेश्याको समझा कर आधी रातमें गया और अपनी चतुराईसे हार चुरा लाया। हारकी कांतिसे गृहरक्षक और कोट-पालोंने विद्युत चोरको पकड़ लिया, वह भाग न सका तथा वारिषेण कुमारके आगे उस हारको रखकर अदृश्य हो गया। कोटपालोंने उसे वैसा देखकर राजा श्रेणिकसे कहा कि "महाराज! वारिषेण चोर है।" यह सुनकर राजाने कहा कि "इस ढीठका मस्तक उड़ा दो।" मातङ्गने मस्तक उड़ानेके लिये जो तलवार चलाई वह वारिषेणके कण्ठमें पुष्पमाला बन गई!

इस अतिशयको सुनकर राजा श्रेणिकने अपने पुत्र वारिषेणसे क्षमा याचना की। हारके चुराने वाले विद्युत चोरने राजासे अपना सब वृत्तान्त सुनाया और कहा कि मुझे वारिषेणने अभय-प्रदान किया है। राजा साहब, वारिषेणको घर ले

जाने लगे किन्तु वारिषेणने कहा कि मुझे पाणि-पात्रमें भोजन करना है अर्थात् मुनि दीक्षा ले लेनी है। इसके बाद वारिषेणने सूरिसेन मुनिसे मुनि दीक्षा ग्रहण कर ली।

एक बार वारिषेण मुनि राजगृहके पास पलासकूट ग्राममें चर्याके लिये प्रविष्ट हुये। उस में श्रेणिक राजा और अग्निभूति नामक मन्त्री था। राज पुत्र पुष्पडालने पड़गाहा और आहार कराया। पुष्प डाल अपनी धर्मपत्नी सोमिल्लासे पूछ, बालमित्र वारिषेण मुनिके पीछे पीछे हो चला। बादमें पुष्पडालने अपने बचपनके खेलने कूदनेके उपवनको दिखाया, तथा बार बार बन्दना की। तब वारिषेणके धर्मोपदेशसे पुष्पडालने वैराग्य धारण कर लिया और अपनी पत्नी सोमिल्लाका विस्मरण कर दिया।

वे दोनों बारह वर्ष तक साथ साथ तीर्थ यात्रा करते हुये श्रीवर्धमान स्वामीके समवशरणमें पहुंचे। वहां पुष्पडालने देवों द्वारा वर्धमान स्वामी और पृथ्वीके सम्बन्धका गीत सुना, वह यह है:—

"मइल कुचैली दुम्मनी, नाहे पविसिय एण।
कह जीवेसइ धणियघर, उज्झंते हियएण॥"

इसका अभिप्राय यह है कि हे वर्धमान स्वामी ! तुमने इस पृथ्वीका वर्षा भोग किया है, अब तुम्हारे बिना पृथ्वी विकल हो रही है। ऐसा सुनकर पुष्पडालको, अपनी पत्नी सोमिल्ला से मिलनेकी तीव्र अभिलाषा हो गई।

मुनि वारिषेणने पुष्पडालका अभिप्राय समझ लिया और उसे धर्ममें स्थिर रखनेके लिये अपने नगर ले चले। रानी चेलिनीने उन दोनोंको वापिस आते देखकर सोचा कि "वारिषेण चारित्रसे विचलित हो गया है" इसलिये परीक्षा करनेके निमित्त सराग और वीतराग दो आसन दिये। सराग (सुवर्ण) आसनपर पुष्पडाल बैठा तथा वीतराग (काष्ठ) आसनपर वारिषेणने बैठकर कहा कि मेरी अन्तःपुरमें रहनेवाली पत्नियोंको बुलाओ। तब चेलिनीने आभूषण सहित बत्तीसों पत्नियां सामने उपस्थित कर दीं। वारिषेणने पुष्पडालसे कहा कि तुम मेरे युवराजपद और इन रूपवती बत्तीसों पत्नियोंका उपभोग करो। इतना सुनकर पुष्पडाल बहुत लज्जित हुआ और उसने परम वैराग्य धारण कर लिया तथा परमार्थ रूपसे तपश्चरणमें संलग्न हो गया। इसलिये :—

दर्शनसे अथवा चरित्रसे, कोई होवे चलित अगर।
उसे पुनः स्थापित कर देना, स्थितीकरण कहते बुधवर ॥

(सप्तम वात्सल्य अङ्गमें)

विष्णु कुमार

अवन्ति देशकी उज्जयिनी नगरीमें श्रीवर्म्मा राजा राज्य करते थे। उसके बलि, बृहस्पति, प्रल्हाद और नमुचि नामक चार मंत्री थे। वहां एक दिन उपवनमें सम्पूर्ण शास्त्रोंके ज्ञाता दिव्य ज्ञानी सात सौ मुनि सहित श्री अकम्पनाचार्य्य पधारे। आचार्यने समस्त संघसे कह दिया कि यदि राजा भी आवें तो भी कोई कुछ न बोले अन्यथा समस्त संघका नाश हो जावेगा। राजाने नागरिकोंको असमयमें पूजा निमित्त जाते हुये, मन्त्रियोंसे पूछा कि ये सब कहां जाते हैं? उन्होंने कहा कि नगरके बाहर उपवनमें बहुतसे मुनि आये हुए हैं। राजाने कहा हम लोगोंको भी उनके दर्शनके लिये चलना चाहिये। तब साथमें सब मंत्री भी गये। प्रत्येक मुनिकी बन्दना की

श्रावकाचारकी सच्ची कहानियां
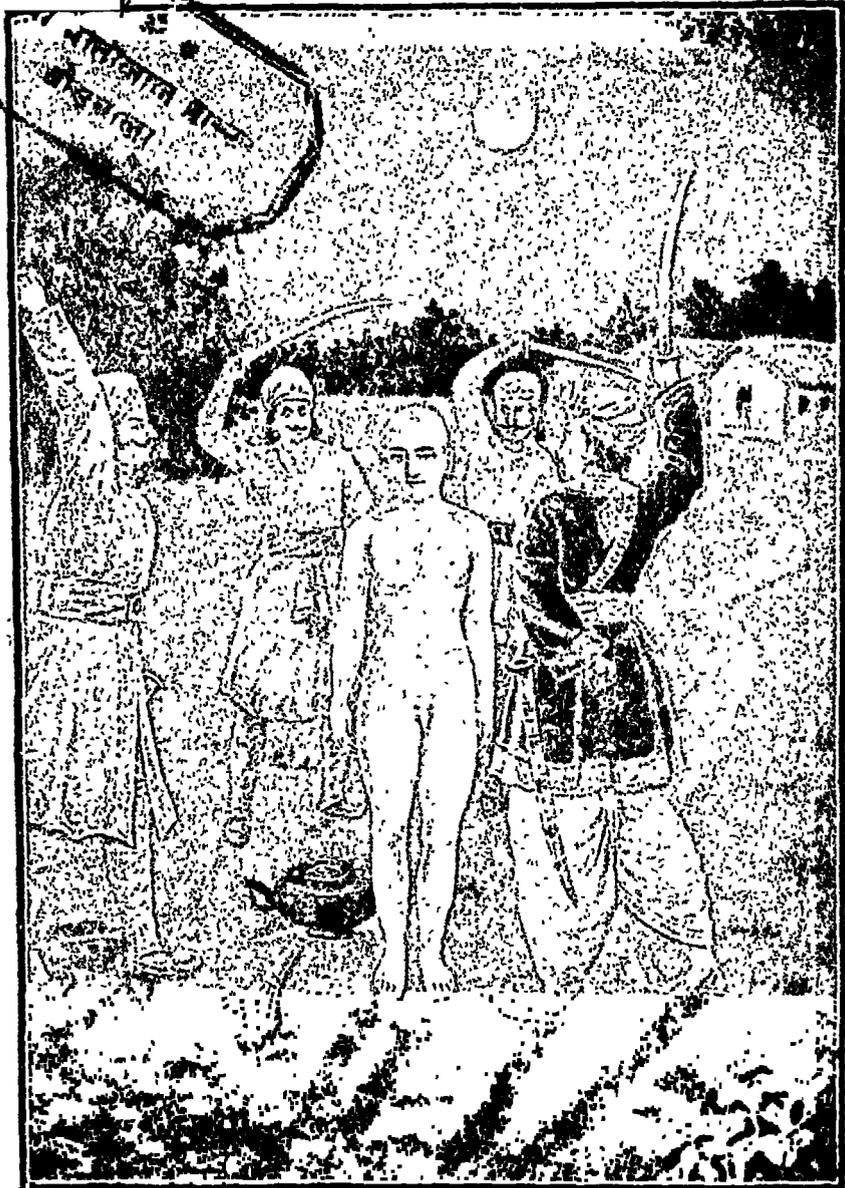
श्रुतसागर मुनिपर चारों मंत्री वार कर रहे हैं

किन्तु किसीने भी आशीर्वाद नहीं दिया। राजाके लौटनेपर मंत्रियोंने दुष्ट अभिप्रायसे मुनियोंकी हंसी उड़ाई और कहने लगे कि ये सब कोरे बैल हैं; कुछ भी नहीं जानते, तभी तो मौनका ढोंग बनाये हुए हैं। ऐसा कहते हुए रास्तेमें जा रहे थे कि श्रुतसागर मुनिको चर्यासे वापिस आते देख मंत्री बोले :—देखो यह मस्त सांड इसका कैसा पेट तना है ? ऐसा सुनकर मुनिने राजा सा० के सामने हो शास्त्रार्थ कर उन मिथ्यादृष्टी चारों मंत्रियोंको पराजित कर अनेकान्त मतपर विजय प्राप्त की और अकम्पनाचार्यसे आकर सब वृत्तान्त सुनाया। आचार्यने कहा कि तुमने शास्त्रार्थ करके अच्छा नहीं किया सारा संघ विध्वंस होनेकी सम्भावना है, हां, यदि तुम वाद स्थानमें जाकर रात्रिमें अकेले खड़े रहोगे तो संघ जीवित रह सकता है जावेगा और तुम्हारी शुद्धि हो जावेगी, तब वह श्रुतसागर मुनि वहीं जाकर कायोत्सर्ग करने लगा। मंत्रियोंने बहुत क्रुध और लज्जित होकर रात्रिमें संघको मारनेके लिये विचार किया और शस्त्र लेकर चल पड़े। थोड़ी दूर जानेपर वे क्या देखते हैं कि एक मुनि खड़ा है पास जानेपर उन्हें ज्ञात

हुआ कि जिसने उन्हें पराजित किया था वह यही है तब उसे मारनेके विचारसे एक साथ चारों ने तलवार उठाई। इतनेहीमें नगर देवताका आसन कम्पित हो उठा और उसने उन चारों मंत्रियोंको कीलित कर दिया। प्रातःकाल होनेपर समस्त नगर निवासियोंने उन्हें वैसा ही कीलित देखा। राजाने रुष्ट होकर मंत्रियोंको प्राण दण्ड न देकर गधोंपर चढ़ा अपमान कर नगरसे बाहर निकलवा दिया।

इसके बाद कुरुजंगल देशके हस्तिनापुर नगर में राजा महापद्म रानी लक्ष्मीमती और उनके पद्म तथा विष्णु नामक दो पुत्र थे। वह पद्मको राज्य देकर राजा महापद्म, विष्णुके साथ श्रुत-सागर चन्द्राचार्यसे दीक्षा लेकर मुनि हो गये। वे बलि आदि पद्म राजाके मंत्री बन गये। इससे कुम्भपुरका राजा सिंहबल दुर्गके बलसे राजा पद्मके साथ उपद्रव करने लगा।

राज्यग्रहणकी चिन्तासे पद्मको दुर्बल देखकर बलिने कहा कि महाराज! दुर्बलताका क्या कारण है? ऐसा राजासे कहा। यह सुनकर, आज्ञा मांगी। वहां जाकर बुद्धिके प्रभावसे दुर्गको भङ्ग

कर दिया और सिंहबलको पकड़कर वापिस आया। उसने इसे पद्म राजाके आधीन कर दिया और कहा कि महाराज! "यह सिंहबल है।" राजाने सन्तुष्ट होकर उससे वर मांगनेके लिये कहा। बलिने कहा कि जब मुझे आवश्यकता होगी तब मांग लूंगा।

इसके बाद कुछ दिनोंमें विहार करते हुए अकम्पनाचार्य आदि सात सौ मुनि हस्तिनापुर पधारे। नगरमें कोलाहल मच गया। मंत्रियोंको भी मालूम हो गया। उन्हें यह मालूम था कि राजा पद्म जैनी है और मुनियोंका भक्त है। ऐसा विचार कर उन मुनियोंके मारनेके लिये पद्मराजासे "सात दिनके लिये राज्य मांगा।" राजा पद्म सात दिनका राज्य बलिको देकर स्वयं अन्तःपुरमें रहने लगा।

बलिने आतापन गिरिपर कायोत्सर्ग करने वाले मुनियोंको बाड़ेमें घेरकर मण्डप बनाया और यज्ञ करना प्रारम्भ कर दिया। उनपर झूठे बर्तन बकरी आदिका मांस और धुआं वगैरहसे मुनियोंको मारनेके लिये उपसर्ग किया। तमाम मुनि संन्यास धारण किये रहे।

इसके बाद मिथिला नगरीमें, आधी रातके समय बाहर निकल कर श्रुतसागरचन्द्र आचार्यने आकाशमें श्रवण नक्षत्रको कम्पित होते देखा। तब अवधिज्ञानसे उन्हें मालूम हुआ कि महामुनियोंपर घोर उपसर्ग हो रहा है। यह सुनकर पुष्पधर नामक विद्याधर क्षुल्लकने पूछा कि हे भगवन्! कहां किन मुनियोंपर, उपसर्ग हो रहा है? उन्होंने कहा कि हस्तिनापुरमें अकम्पनाचार्य आदि सात सौ मुनियोंपर यह उपसर्ग कैसे दूर होगा? आचार्यने कहा कि धरणिभूषण गिरिपर विक्रिया ऋद्धि सम्पन्न विष्णु कुमार मुनि विराजे हैं, वे इनके उपसर्गको दूर करनेमें समर्थ हैं। विद्याधर ऐसा सुनकर उनके पास गया और उसने विष्णु कुमार मुनिसे सब समाचार कहे। विष्णु कुमारने अपना हाथ फैलाकर परीक्षा की कि मुझे विक्रिया ऋद्धि सचमुच प्राप्त हो गई है। तत्पश्चात् वे हस्तिनापुर गये और पद्म राजासे बोले कि "क्या तुमने उपसर्ग कराया है, तुम्हारे कुलमें ऐसा किसीने भी नहीं किया।" पद्मराजाने कहा कि मैंने बलिको वर दिया था। इसके बाद विष्णु कुमार मुनिने वामन ब्राह्मणका वेष धारण

किया और दिव्य ध्वनिसे प्राध्ययन (वेदपाठ) करने लगे। इससे बलि बहुत प्रसन्न हुआ और वामनसे वर मांगनेके लिये कहा। इन्होंने तीन पांव भूमि मांगी। लोगोंके बार बार कहनेपर भी इन्होंने तीन पांव भूमिसे अधिक कुछ नहीं चाहा। बादमें हस्तोदकादि (हाथमें जल देना आदि) विधिसे तीन पांव भूमि प्रदान करनेपर वामनने एक चरण मेरु पर्वतपर रखा. दूसरा मानुषोत्तर गिरिपर और तीसरा पैर देव विमान आदिमें क्षोभ उत्पन्न कर बलि मंत्रीकी पीठपर रखकर इस प्रकार बलिको वचन बद्धकर समस्त पृथ्वीपर अधिकार कर लिया और मुनियोंके घोर उपसर्गका निवारण कर दिया। तदनन्तर बलि आदि चारों मंत्री राजा पद्मके भयसे भागकर विष्णुकुमार मुनि और अकम्पनाचार्य आदिके पवित्र चरणोंकी शरणमें आये तथा इन्होंने जैन दीक्षा धारणकर आत्म कल्याण किया।

उपसर्ग निवारणका दिन श्रावण सुदी पूर्णिमा का था। इसीलिये उक्त आशयको लेकर ही रक्षा बन्धनका पर्व मनाया जाता है। इसलिये :—

जैन धर्म्म धारक पुरुषोंका, निश्छल हो आदर करना।
पूजन और प्रशंसा करना, वत्सलगुण नित आचरना॥

(अष्टम प्रभावना अङ्गमें)

मुनि वज्रकुमार

हस्तिनापुरके राजा बलका पुरोहित गरुड़ था। इसके पुत्रका नाम सोमदत्त था। यह सकल शास्त्रोंका अध्ययन कर अहिच्छत्रपुरमें अपने मामा सुभूतिके पास जाकर बोला —"मामा, मुझे राजा दुर्मुखका दर्शन करना है।" गर्वसे चूर होकर मामाने राजासे भेंट नहीं कराई। इसके बाद वह स्वयं हठ पूर्वक सभामें गया और राजाको आशीर्वाद देकर तथा अपना पाण्डित्य एवं चातुर्य्य प्रकट कर मन्त्री बन गया। उसको चतुर समझकर सुभूतिने अपनी यज्ञदत्ता नामक पुत्रीका विवाह भी कर दिया। एक बार गर्भवती यज्ञदत्ताने वर्षाकालमें आम खानेकी इच्छा प्रकट की। तब सोमदत्त आम ढूंढता हुआ, जिस वृक्षके नीचे सुमित्राचार्य योग ग्रहण किये हुए थे उसे नाना फलोंसे फलित देखकर आम फलको तोड़ लिये और एक आदमीके हाथ भिजवा दिये। वृक्षको असमय फलित देखकर आचार्यजीका प्रताप

समझा। उसने धर्म ग्रहण कर वैराग्य धारण किया और आगमोंका अध्ययन कर पश्चात नाभिगिरिपर तपस्या करने लगा।

यज्ञदत्ताके पुत्र उत्पन्न हुआ, पासमें आया सुनकर भाईके पास गई। भाइयोंसे अपने पतिके तपश्चरणकी बात सुनकर उनके साथ ही तपोभूमिके पास गई और बहुत क्रोधसे सोमदत्तके ऊपर बालकको पटक कर दुर्वचन कहती हुई घर चली गई।

इतनेहीमें अमरावतीपुरीसे दिवाकर देव नामक विद्याधर आया। वह पुरन्दर नामक छोटे भाईसे राज्यसे निकाल दिया गया था। वह स्त्री सहित मुनिकी वन्दनाके लिये आया। उस बालकको ग्रहणकर अपनी पत्नीको दे दिया और इसका नाम वज्रकुमार रखकर चला गया।

वज्रकुमारने कनक नगरमें विमल वाहन नामक अपने मामाके पास सम्पूर्ण विद्याओंका अध्ययन किया और पूर्ण यौवन प्राप्त किया। बादमें गरुडवेग और अंगवतीकी पुत्री पवनवेगा हेमन्त पर्वतपर बहुत परिश्रमसे प्रज्ञप्ति विद्या सिद्ध कर रही थीं। हवासे उड़कर वेरका बड़ा

कांटा आंखोंमें आ चुभा। इससे पीड़ा होनेपर पवनवेगा ध्यानसे विचलित हो जावेगी और विद्या सिद्ध नहीं होगी। इसलिये वज्रकुमारने कण्टकविद्ध लोचन देखकर बहुत सावधानीसे उसका कांटा निकाल दिया। फिर स्थिर चित्त कन्याको विद्या सिद्ध हो गई। पश्चात् पवनवेगाने कहा कि आपकी कृपासे मुझे विद्या सिद्ध हुई है, आप ही मेरे जीवनके स्वामी बनिये। इन दोनोंका विवाह हो गया।

वज्रकुमारने कहा हे पूज्य! मैं किसका पुत्र हूँ? यह सच कहिये। तभी मैं भोजनादि करूंगा। बादमें उसने सब वृत्तान्त सच सच सुना दिया। यह सुनकर अपने बन्धुओंके साथ अपने गुरुका दर्शन करने मथुराकी क्षत्रिय गुहा पहुंचा। वहां सोमदत्त गुरुकी वन्दना कर दिवाकर देवने सब वृत्तान्त कहा। समस्त बन्धुओंका बहुत कष्टसे संग त्याग कर वज्रकुमारने मुनि दीक्षा धारण कर ली।

तदनन्तर—मथुरामें राजा पूतिगन्ध और रानी उर्विला थी। उसे सम्यग्दर्शन था व सदा जिनधर्मकी प्रभावना करनेमें लीन रहा करती थी।

नन्दीश्वरके आठ दिनोंमें तीन बार प्रतिवर्ष जिनेन्द्र भगवानकी रथयात्रा निकलवाया करती थी। इसी नगरमें सेठ सागरदत्त और सेठानी समुद्रदत्ता तथा पुत्री दरिद्रा रहती थी।

सागरदत्तके मरनेपर एक दिन दरिद्रा दूसरेके घरमें फेंका हुआ अन्न खा रही थी। चर्याके लिये दो मुनि आये उनमें लघु मुनिने कहा कि हाय नीच, तू बड़े कष्टसे जीवन बिता रही है। यह सुनकर ज्येष्ठ मुनिने कहा कि यह इसी राजाकी पट्टरानी वल्लभा होगी। भिक्षाके लिये भ्रमण करनेवाले धर्मश्री बन्दकने यह वचन सुनकर कि "नान्यथा मुनिभाषितम्" अर्थात् जैन मुनियोंका कथन मिथ्या नहीं होता ऐसा विचार कर दरिद्राको अपने घर ले जाकर मिष्टाहारादिसे पालन पोषण किया।

एक बार उस युवती दरिद्राको चैत्र मासमें क्रीड़ा करती देखकर राजा काम विह्वल हो गया। मन्त्रियोंने राजाके लिये बन्दकसे दरिद्राकी याचना की। उसने कहा कि यदि राजा मेरा धर्म स्वीकार करें तो देनेके लिये तैयार हूँ। यह सब निर्णय हो गया और विवाह कर दिया गया। राजा

पट्टरानीपर बहुत आसक्त हो गये थे। फाल्गुन मासकी नन्दीश्वर यात्रामें उर्विलाके रथ यात्रा-महोत्सवको देखकर पट्टरानीने कहा कि महाराज ! पहिले मेरा बुद्ध भगवानका रथ नगरमें भ्रमण कराना चाहिये। राजाने कहा 'ऐसा ही होगा।'

तब उर्विला रानीने कहा कि 'यदि मेरा जैन-रथ प्रथम निकलेगा तो ही आहार लूंगी अन्यथा आहारका त्याग है।' ऐसी प्रतिज्ञा ग्रहण कर क्षत्रिय गुहामें सोमदत्त गुरुके पास पहुंची।

इतनेमें वज्रकुमार मुनिने, बन्दना भक्तिके लिये आये हुए दिवाकर देव आदि विद्याधरसे वृत्तान्त सुनकर, प्रतिज्ञा बद्ध उर्विलाकी आकाशमें रथ यात्रा कराई। यदि वज्रकुमार मुनि, विद्याधर आदिको रानी उर्विलाकी प्रतिज्ञा पूर्ण करने में प्रेरणा न करते तो बुद्ध धर्मका प्रभाव बढ़ जाता लेकिन ऐसा न होकर बहुत ठाठके साथ आकाशमें जिनेन्द्र भगवानका रथ निकलवाया जिससे विधर्मियोंने भी जैन धर्मकी शरण लेकर आत्माका सच्चा कल्याण किया। इससे विधर्मों का लोप और जैन धर्मका प्रकाश हो गया। यह

अतिशय देखकर बुद्ध दासी भी जैन धर्ममें गाढ़ श्रद्धा रखने लगी । इसलिये :—

व्याप्त हुये अज्ञान तिमिरको, यथाशक्ति कर देना दूर ।
जिन शासन माहात्म्य प्रकाशन, है प्रभावना गुण भरपूर ॥

अहिंसाणुव्रतमें मातंग

सुरम्य देशके पोदनपुरमें राजा महाबल राज्य करता था । नन्दीश्वरकी अष्टमीके दिन राजाने यह घोषित किया कि आठ दिन कोई जीवोंकी हिंसा न करे । महाबलका पुत्र बलकुमार बहुत मांस लोलुप था । राज उपवनमें उसने एकान्त समझा और छिपकर एक मेंढक मारकर खा लिया।

राजाने मेंढक मारने वालेकी खोज करना प्रारम्भ कर दिया । उसी उपवनके मालीने, जो वृक्षके ऊपर चढ़ा हुआ था, बलकुमारको मेंढक मारते देख लिया था । रातमें माली अपनी स्त्रीसे यह समाचार कह रहा था । यह किसी गुप्तचरने सुनकर राजासे निवेदन कर दिया । प्रातःकाल होनेपर माली बुलाया गया । उसने सब ठीक २

कह दिया। राजाको बहुत क्रोध आया कि मेरा ही पुत्र मेरी आज्ञाका उल्लंघन कर रहा है। राजाने रुष्ट होकर कोटपालसे बलकुमारके नव खण्ड अर्थात् शरीरके टुकड़े टुकड़े काटकर मारनेकी आज्ञा दी। बलकुमार मारनेके स्थानपर लाया गया। मातङ्गको बुलानेके लिये जो पुरुष गये थे उन्हें देखकर अपने घरके कोनेमें खड़ा हो गया और अपनी स्त्रीसे कह दिया कि उन लोगोंसे कह देना कि मातंग गांव चला गया है। तलारों (सिपाहियों) ने मातंगको बुलाया तब मातंगीने कह दिया कि वह गांव चला गया है। तलार बोले कि वह अभागा पापी आज ग्राम चला गया आज उसे कुमारको मारनेसे बहुत सुवर्ण और रत्नोंके मिलनेकी आशा थी। उनके ये बचन सुनकर मातंगीको बहुत लोभ उत्पन्न हो गया और मातंग की ओर संकेत करते हुए उनसे फिर बोली कि मातंग ग्राम चला गया। इसके बाद तलार मातंगको घरसे निकाल कर राजाके पास ले गये और कुमार मारनेके लिये सौंप दिया गया। मातंगने कहा कि आज चतुर्दशीका दिन है, आज प्राणीवध नहीं करूंगा।

राजा अवाक् रह गया और न मारनेका कारण पूछा। उसने कहा कि मुझे सांपने डस लिया था और मैं श्मशानमें फेंक दिया गया था। सर्वौषधि मुनिके शरीरकी वायुसे पुनर्जीवित हुआ हूँ और उन्हींसे चतुर्दशीके दिन प्राणि-वध न करनेकी प्रतिज्ञा ली है। इसलिये महाराज! आज मैं वध नहीं करूंगा, आप जैसा चाहें सो करें। राजाका क्रोध और बढ़ गया तथा बलकुमार और मातंग दोनोंको कसके बंधवा कर सुमारग्रह अथवा शिशुमार ह्रदमें फिंकवा दिया। मातंगकी प्रतिज्ञा थी कि प्राण भी चले जावें लेकिन अहिंसा-णुव्रतका भङ्ग नहीं करूंगा। इसलिये व्रतके माहात्म्यसे जल देवताने सिंहासन, मणियोंसे सुशोभित मण्डप, दुन्दुभि आदि प्रातिहार्य दिये।

राजा महाबल यह सुनकर भयभीत हुआ और मातंगको पूजाकर अपने छत्रमें स्नान कराया। अस्पृश्य भी स्पृश्य बना लिया गया।

(सत्याणुव्रतमें)

सेठ धनदेव

जम्बूद्वीपके पूर्वविदेहमें पुष्कलावती प्रान्त है। उसकी पुण्डरीकिणी पुरीमें धनदेव और जिनदेव व्यापारी रहते थे, दोनों साधारण परिस्थिति के थे। उनमें धनदेव सत्यवादी था। दोनोंमें यह निर्णय हो गया था कि जो कुछ लाभ होगा, उसका आधा आधा भाग बांट लिया जावेगा। दोनों दूर देश गये और बहुत अर्थ लाभ किया पश्चात् सकुशल पुण्डरीकिणी वापिस आये। जिनदेवकी नियत बदल गई और लाभका आधा आधा देनेमें आनाकानी करने लगा। वह थोड़ा द्रव्य देना चाहता था। धनदेवने नहीं लिया। स्वजन और महाजन तथा राजाके सामने निर्णय कराना चाहा किन्तु इससे जिनदेव सहमत नहीं हुआ। जिनदेव कहता था कि मैंने आधा आधा देना स्वीकार नहीं किया था। उचित (थोड़ा) देनेको कहा था। धनदेवने कहा कि दोनोंका आधा आधा ही ठहरा था। यही कारण था कि जिनदेव स्वजन और

महाजनोंका निर्णय स्वीकार नहीं करता था, नियत खराब हो जानेसे उसने सोचा कि धनदेवको देना ही न पड़े किन्तु इससे सबके हृदयमें सत्यासत्य का निर्णय हो ही गया और इसीलिये राजाने वह सब द्रव्य धनदेवको दिला दिया। इससे धनदेवकी बहुत प्रतिष्ठा हुई। सच है सत्य समान कोई दूसरा तप नहीं होता और झूठके समान कोई पाप नहीं होता। सत्यवादी सदा निर्भीक रहता है।

(ब्रह्मचर्याणुव्रतमें)

नीली

लाटदेशमें भृगुकच्छ नामक नगर है उसका राजा वसुपाल था। उसमें जिनदत्त नामक वैश्य, उनकी पत्नी जिनदत्ता और पुत्री नीली थी। नीली अतिशय रूपवती और गुणवती थी। उसी नगरमें सेठ समुद्रदत्त, स्त्री सागरदत्ता और पुत्र सागरदत्त भी रहता था।

एक बार नीली कायोत्सर्ग पूर्वक ध्यानसे भक्ति

भाव सहित पूजन कर रही थी। नीली समस्त अलंकारोंसे सुशोभित होनेके कारण देवांगनाके समान मालूम पड़ रही थी। सागरदत्तने उसकी ओर संकेत किया तब सागरदत्तके मित्र प्रियदत्तने कहा कि यह सेठ जिनदत्तकी पुत्री नीली है।

उसके रूप लावण्यपर अत्यन्त आसक्त होकर नीलीसे विवाह करनेकी चिन्तासे सागरदत्त बहुत दुर्बल होता गया। समुद्रदत्तने यह सुनकर कहा :—हे पुत्र ! जिनदत्त जैनीके सिवाय किसी के साथ सम्बन्ध नहीं करेगा। इसलिये पुत्र और पिता दोनों कपटी श्रावक बन गये तो फिर नीलीसे सम्बन्ध हो गया। नीली कट्टर जैन और वे दोनों बुद्धके परम भक्त थे। नीलीका पिताके घरमें जाना भी बन्द हो गया। ऐसी वंचना-ठगे जाने पर जिनदत्तने कहा कि नीली मेरी पुत्री हुई ही नहीं, कुएमें गिर पड़ी अथवा यमराजकी अतिथि बन गई ! इत्यादि। नीली ससुरालमें रहकर भी एक पृथक् मकानमें जिनधर्मका स्वाध्याय आदि किया करती थी। ऐसा देखकर ससुर और उसके पतिने सोचा कि बुद्ध मुनियोंके दर्शनसे, संसर्गसे, वचनोंसे, धर्म आदि श्रवणसे कालान्तरमें नीली

भी बुद्ध भक्त हो जावेगी ऐसा विचार कर समुद्र-दत्तने कहा कि—"नीली पुत्री ज्ञानवान वन्दकोंको आहार कराओ।" बादमें वन्दकोंको आमन्त्रण और आह्वान कर जूतोंको बारीक पीसकर मिष्टान्न तैयार किये। भोजनके बाद जाते समय उन्होंने अपने जूते नहीं पाये। तब नीलीने उत्तर दिया कि आप ही लोग ज्ञानसे जानिये यदि ज्ञान नहीं है तो आप लोग वमन (कै-उलटी) करें, आप लोगोंके ही पेटमें रखे हुये हैं। इस प्रकार वमन करनेपर जूतोंके टुकड़े दिखाई दिये। इससे ससुराल वालोंको बहुत बुरा मालूम हुआ। बादमें सागरदत्तकी बहिनने क्रोधके कारण नीलीपर पर-पुरुष सम्बन्धका असत्य लाञ्छन लगाया। ऐसी हवा उड़नेपर नीलीने जिनेन्द्र भगवानके सामने कायोत्सर्ग धारण किया और जबतक इस अपवाद का निराकरण न हो जावे तबतकके लिये अन्नजल का त्याग कर दिया। इससे नगर देवताको बड़ा क्षोभ उत्पन्न हुआ और रातमें ही आकर बोला—"हे महासती! इस प्रकार प्राणोंका परित्याग मत करो, मैं राजाके प्रधान कर्मचारियों तथा नागरिकों को स्वप्न दिलाऊंगा। और कहूंगा कि नीलीके

चरणस्पर्शसे ही द्वार खुलेंगे।" नगरके सब मुख्य मार्गों के द्वार बन्द हो गये। सवेरा होनेपर यह घटना देख बहुत आश्चर्य हुआ। राजाको स्वप्न का स्मरण हुआ। सबके बहुत प्रयत्नोंके विफल होनेपर महासती नीलीका स्मरण किया गया। नीलीके वामचरण (बायें पांव) के स्पर्श मात्रसे सब द्वार खुल गये। इससे सती नीलीके ब्रह्मचर्य का प्रताप छा गया। राजा और ससुर वगैरह सबने नीलीका बहुत सम्मान किया।

(परिग्रह परिमाण अणुव्रतमें)

राजपुत्र-जयकुमार

कुरुजांगल देशके हस्तिनापुर नगरमें कुरुवंशी राजा सोमप्रभ और पुत्र जयकुमार रहता था। उनकी भार्याका नाम सुलोचना था।

एक बार पूर्व विद्याधरके भवकथनके बाद पूर्वजन्मका ज्ञाता आया उसने हिरण्यधर्म और प्रभावती विद्याधरका रूप धारण कर मेरु आदिकी बन्दना भक्ति कर कैलाशगिरिपर भरत द्वारा

प्रतिष्ठा कराये हुए चौबीस तीर्थंकरोंकी वन्दनाके लिये जयकुमार और सुलोचना आई।

इतनेमें सौधर्मेन्द्रने जयकुमारकी परिग्रहपरिमाणव्रतकी प्रशंसा की। इसकी परीक्षा करनेके लिये रतिप्रभ देव आया। वह स्त्रीका रूप धारण कर चार वेश्याओंके साथ जयकुमारके पास जाकर बोला। सुलोचनाके स्वयम्बरमें जिसने तुम्हारे साथ संग्राम किया था मैं उस नमिविद्याधर पति की रानी सुरूपा हूँ, नवयौवना और समस्त विद्याओंकी अधिकारिणी हूँ मुझे स्वीकार कीजिये अगर आपको उसके राज्यकी और अपने जीवनकी अभिलाषा हो। यह सुनकर जयकुमार बोले :— हे सुन्दरी! ऐसा मत कहो; परस्त्री मेरी माताके समान हैं। इसके बाद उसने जयकुमारके ऊपर अनेक उपसर्ग किये किन्तु वह विचलित नहीं हुआ। बादमें मायाको संकुचित कर पूर्ववृत्तान्त सुनाया और वस्त्रादि द्वारा पूजनकर स्वर्ग चला गया। देखिये जयकुमारने स्त्रीसुख और राज्य जैसी सम्पदापर लात मारकर कैसी प्रतिष्ठा पाई।

पांच पापोंमें प्रसिद्धि पाने वालोंकी कथायें

हिंसामें धनश्री

—○○○—

लाटदेशके भृगुकच्छ नगरमें राजा लोकपाल राज्य करता था। उसमें सेठ धनपाल और उसकी स्त्री धनश्री रहती थी। धनश्री जीव वध करनेमें बिलकुल भी नहीं हिचकती थी। उसकी पुत्री सुन्दरी और पुत्र गुणपाल था। इस समय धनश्रीने जिस बालक कुण्डलको पुत्र समझ कर पालन पोषण किया था, अपने पति धनपालके मरनेपर उससे (कुण्डलसे) कुकर्मरत हो गई।

गुणपाल समझदार हो गया। धनश्रीने विचारा कि गुणपाल हम दोनोंके आमोद प्रमोदमें बाधक होगा, इसलिये किसी प्रकार गुणपालका वधकर दिया जावे। सवेरे जब यह गायें चराने जावे तब कुण्डल पीछे पीछे जाकर उसका काम तमाम कर डाले। यह बात सुन्दरीने सुन ली और गुणपालसे कह दी कि भाई, तुम जब सवेरे गायें चराने जाओगे तब कुण्डलके हाथों माता तुम्हें मरवा डालेगी इसलिये सावधान रहना। सवेरा

होनेपर धनश्रीने गुणपालसे कहा कि आज कुण्डल का स्वास्थ्यअच्छा नहीं है इसलिये आज गायें चराने तुम्हीं जाना। उसे सब हाल मालूम ही था। गुणपाल गायें चराने गया और साथमें तलवार छिपा ली। वह अपने कपड़े एक सूखे पेड़को पहिना कर आप छिपकर खड़ा हो गया। कुण्डलने उसे गुणपाल समझ कर तलवार चलाई, ठूंठ गिर पड़ा यह देख उसे बहुत आश्चर्य हुआ। गुणपालने अवसर पाकर कुण्डलपर वार करके उसे सदाके लिये संसारसे विदा कर दिया।

गुणपालको अकेले वापिस आता देख धन-श्रीने पूछा कि कुण्डल कहां है? उसने कहा कि कुण्डलका समाचार मेरी इस तलवारसे पूछ! तलवारको रक्तसे लिप्त देखकर, कुण्डल इसीसे मारा गया है। उसने क्रोधसे तलवार छुड़ा कर गुणपालको मार डाला। यह देखकर सुन्दरी को क्रोध आया और मूसल उठाकर धनश्रीको मारने लगी। दोनोंका झगड़ा और मारपीट सुन-कर कोतवाल सिपाही वगैरह आ गये। धनश्रीको पकड़ कर ले गये और उसे राजाके सामने उप-स्थित कर दिया। राजाने गधेपर चढ़ाकर कान

नाक कटाकर धनश्रीकी दुर्दशा की। अन्तमें वह तड़प २ कर मरके नरकमें पहुंची।

असत्यवादी सत्यघोष

जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें सिंहपुर नगरमें राजा सिंहसेन, रानी रामदत्ता और पुरोहित श्रीभूति रहते थे। श्रीभूति ब्रह्मसूत्र—जनेऊमें कैंची बांध कर घूमा करता था। सबसे कहा करता था कि यदि मेरी जीभ असत्य भाषण करेगी तो उसे कैंचीसे उड़ा दूंगा। इस प्रकार उसका दूसरा नाम सत्य-घोष भी पड़ गया। लोग उसपर बहुत विश्वास करने लगे। और उसके यहां धरोहर रखने लगे। उसमेंसे कुछ वापिस कर बाकी आप रख लिया करता था। इसपर लोगोंने राजासे शिकायत की किन्तु उसे सत्यघोषपर बहुत भरोसा था। इस लिये लोगोंको धमका कर भगा देता था।

एक दिन पद्मखण्डपुरसे समुद्रदत्त नामक वैश्य-पुत्र आया। वह सत्यघोषके पास पांच अमूल्य रत्न रखकर द्रव्य उपार्जन करनेके लिये चला गया।

जब वह धन संचित कर वापिस आने लगा तो जहाज डूब गया और जहाजके एक तख्तेके सहारे समुद्र पार कर सत्यघोषके पास सिंहपुरमें आया। सत्यघोषको सब समाचार मालूम थे। उसने समुद्रदत्तको आते देख पड़ोसियोंसे कहा कि देखो यह दरिद्री पागल सा आ रहा है शायद यह मुझसे कुछ मांगेगा! इतनेमें वह आ ही गया और सत्यघोषसे अपने धरोहर रखे पांचों रत्न वापिस मांगने लगा। समुद्रदत्तने कहा कि जहाज के डूब जानेसे मेरी दुर्गति हो गई है, गया था द्रव्य कमाने और पासका भी सब खो बैठा हूँ, बड़ी कठिनाईसे जान बचा पाया हूँ। अब कृपा कर मेरे पांचों रत्न वापिस कर दीजिये।

सत्यघोषने पासवालोंसे कहा कि देखो, जैसा मैं कहता था, वैसा ही हुआ। आप लोग ही देखें कि यह पागल सा मालूम पड़ता है, इसके पास रत्न कहांसे आये? कब रख गया था? इत्यादि उसे पागल बनाकर घरसे बाहर निकलवा दिया।

नगर भरमें "सत्यघोषने मेरे पांच रत्न ले लिये, वापिस नहीं देता है" चिल्लाता रहा। तथा राज महलके पासके इमलीके पेड़ पर चढ़ कर

पिछली रातमें यही कहा करता था। इस तरह छह महीने हो गये। एक दिन रानी रामदत्ताने राजा सिंहसेनसे कहा कि महाराज! यह मनुष्य पागल नहीं है। राजा बोले कि सत्यघोष चोरी कर सकता है? रानीने कहा कि देव! हो सकता है, यह सदा ऐसा ही कहा करता है। राजाने कहा कि यदि सत्यघोष चोर है तो उसकी परीक्षा करो। रानी रामदत्ताने सत्यघोषको राज्यकार्य वश आते देख बुलाया और पूछा कि आज आनेमें बहुत देर हुई! उसने कहा कि आज मेरा साला वापिस आया है, उसे भोजन करानेके कारण देर हो गई। रानी फिर बोली कि थोड़ी देरके लिये भीतर आओ, मुझे आज उमङ्ग पैदा हुई है आओ जुआ खेलें।

राजा भी वहां आ पहुंचा और उसने भी ऐसा ही करनेको कहा। सत्यघोष और रानी रामदत्ताका जुआ होने लगा। इतनेमें रानीने अपनी अति विलासिनी नामक दासीको बुलाया और उसके कानमें कह दिया कि जाओ और सत्यघोषकी स्त्रीसे वे पांचों रत्न ले आओ। उस ने देनेसे अस्वीकार कर दिया। दासी वापिस

आई, इतनेमें रानीने हाथकी अंगूठी जीत ली थी। वह अंगूठी दासीको देकर दुबारा सत्यघोषकी स्त्रीके पास भेजा। फिर भी उसने रत्न नहीं दिये। बादमें कैंची और जनेऊ भी जीत लिया था। ये दोनों दासीके हाथ भेजे तब सत्यघोषकी स्त्रीको विश्वास हुआ तब उसने पाँचों रत्न दे दिये। दासीने उन्हें लाकर रानीको दे दिये। रानीने बड़े आनन्द पूर्वक खेल पूरा किया और वे रत्न राजाको बतला दिये। फिर सब वृत्तान्त सुनाया। राजाने अपने रत्नोंमें वे रत्न भी मिला लिये और समुद्रदत्तको बुलाकर अपने रत्न उठा लेनेको कहा। समुद्रदत्तने अपने रत्न ठीक २ पहिचान कर उठा लिये और बहुत प्रसन्न हुआ? इसी अवसरमें राजा और रानीके एक पुत्र रत्नकी प्राप्ति हुई।

बादमें राजाने सत्यघोष नामक सत्यवादीसे पूछा कि 'ऐसा काम तुमने किया है?' सत्यघोषने कहा कि महाराज! यह नीच कर्म मैं कैसे कर सकता हूँ? इसके बाद राजाने क्रुद्ध होकर (क्योंकि इन्हें सब भेद मालूम हो गया था) तीन सजायें दीं।

एक तो यह कि तीन थाली भर गोबर खाओ अथवा हमारे पहलवानोंसे घूंसे खाओ अथवा अपना समस्त धन लाकर उपस्थित करो।

सत्यघोषने विचारा कि सब धन दूंगा तो दरिद्र हो जाऊंगा और घूंसे खाऊंगा तो अकाल मरण होगा, धन नहीं भोग पाऊंगा। इसलिये सबसे अच्छा है कि गोबर खालूं। लेकिन उससे तीन थाली गोबर नहीं खाया गया तब महाराजसे कहा कि पहलवानोंसे घूंसे लगवा दीजिये। एक ही घूंसेमें होश ठंडे हो गये। तब राजासे प्रार्थना की और अपना समस्त द्रव्य देना स्वीकार किया। इस प्रकार दोनों दण्डोंके साथ समस्त धन भी देना पड़ा। पश्चात् मर कर अधिक लोभके कारण राजकीय भांडागारमें अङ्गधन नामक सर्प हुआ। वहांसे भी मरकर दीर्घकाल तक संसारमें परिभ्रमण करता रहा।

सत्यघोषने विचारा कि यदि सच कह दूंगा तो मेरे पाससे सब रत्न चले जावेंगे। झूठ बोलने पर रत्न ही नहीं किन्तु समस्त धन भी चला गया। इस लिये अन्तःकरणसे सदा सत्य भावना का ही स्रोत बहाना चाहिये।

चोरीमें तापस

वत्स्य देशकी कौशाम्बीपुरीमें राजा सिंहरथ और रानी विजया रहती थीं। उसमें एक चोरने साधुका वेष धारण कर लिया और दूसरेकी भूमि का भी स्पर्शन कर एक वृक्षमें सींका बांध कर रहने लगा। दिनमें पंचाग्नि साधन करता और रात्रिमें चोरी किया करता था।

एक बार राजाने कोतवालको बुलाकर कहा कि देखो नगरमें दिन पर दिन चोरी बढ़ती जा रही है और कुछ पता नहीं चलता तो या तो सात दिनमें चोरका पता लगाओ या अपना सिर लाओ अर्थात् नहीं पता लगा तो तुम मार दिये जाओगे। इससे तलार अथवा कोतवालको बहुत चिन्ता हो रही थी। तीसरे पहर कोतवालसे एक ब्राह्मण भीख मांगने आया। उसनें ब्राह्मणसे कहा कि तुम तो अन्न मांग रहे हो और मुझे अपने प्राण बचानेकी पड़ी है। यह सुन कर ब्राह्मणने दुबारा कहा कि—यहां कोई अत्यन्त निस्पृह पुरुष है? तलारने कहा—एक बहुत तपस्वी है किन्तु

वह चोर होगा ऐसी सम्भावना नहीं है। फिर भी ब्राह्मणने कहा कि कोतवाल सा०। वही अत्यन्त निस्पृह बननेवाला चोर होगा। मेरी कथा सुनिये—

मेरी स्त्री महासती बनती थी। पर पुरुषसे स्पर्श भी नहीं हो पावे इस भयसे अपने पुत्रसे भी, स्तनके अग्र भागके सिवाय दूसरे अङ्ग बहुत छिपाकर दूध पिलाया करती थी क्योंकि बालक भी पर-पुरुष है, लेकिन रात्रिमें गृहपिण्डार नामक जारसे कुकर्म कराती थी। यह अपनी आंखोंसे देखकर मुझे बैराग्य हो गया। अपने सब धनको बेच कर मैंने सोना खरीदा और उसको छड़ी सी बनाकर बांसकी लाठीमें रखकर यात्राके लिये निकल पड़ा।

आगे चलकर मुझे एक बालक मिला। उसका मुझे विश्वास नहीं था इसलिये वह लाठी मैं ही रखा करता था।

एक रातमें मैं और वह बालक दोनों कुम्भकार कुम्हारके घर पर सोये। उसके घरसे हम लोग जब दूर निकल पड़े तो वह बालक कहता है कि हाय! हाय!! मैंने बड़ा अपराध किया जो यह तिनका मेरे साथमें चला आया है। ऐसा

कहकर वह कुम्हारका तिनका लौटाने गया और देकर वापिस आ मिला। मुझे उसपर ऐसी बातोंसे विश्वास हो गया था। उस बालकने जाते समय, कुत्ता वगैरह भगानेके लिये मुझसे बांसकी लाठी जिसमें सोनेकी छड़ी रखी था, मांगी। मैंने भोले-पनसे लाठी दे दी। फिर वह बालक आज तक वापिस नहीं आया।

इसके बाद मैंने भयानक जंगलमें बहुत वृद्ध पक्षी देखा। रातमें जैसे सघन वृक्षपर बसेरा करनेके लिये सब पक्षी आये, उनसे वृद्ध पक्षीने कहा कि "हे पुत्रो! मैं इधर उधर भटकनेमें बहुत असमर्थ हूँ, बहुत भूखा हूँ, चित्त चञ्चल हो जाने पर तुम्हारे बच्चोंको खा जाऊंगा, इसलिये सवेरे जाते समय आप लोग मेरा मुंह बन्द कर जावें। पक्षियोंने कहा कि आप हमारे पितामह-बाबाके समान हैं, आपसे यह सम्भावना कैसे की जा सकती है? वह फिर बोला कि "बुभुक्षितः किं न करोति पापम्" अर्थात् भूखा कौनसा पाप नहीं करता। प्रातःकाल होनेपर पक्षी उसका मुंह बन्द कर चले गये। पक्षियोंके चले जानेपर पांवोंसे उसने अपना मुंह खोला और पक्षियोंके बच्चोंको

अपना भोजन बना लिया ! जब पक्षियोंके आने का समय हुआ तब पांवोंसे अपना मुंह बन्द कर लिया और पेट भीतर घुसा लिया। जिससे कोई यह न समझे कि इसने बच्चोंको खाया है।

इसके बाद "अपसरजीवक" नामक साधुके वेषमें चोर देखा। जो दिन रात नगरमें एक शिलाको मस्तकपर हाथोंसे साधे हुये घूमा करता था सदा "अपसरजीव" कहा करता था। इसलिये लोग इसे अपसरजीवक कहा करते थे। यह रात-में जब किसीको आभूषण सहित देखता तो गड्ढा वगैरहमें, चारों तरफ देख एकान्त समझ कर मार डालता और द्रव्य हरण कर लेता।

यह सब देखकर मैंने एक श्लोक बनाया है:--

अबालस्पर्शका नारी ब्राह्मणस्तृणहिंसकः।
बने काष्ठमुखः पक्षी पुरेऽपसरजीवकः॥

अर्थात् पुत्रको भी अपना अङ्ग न छूने देनी वाली, तृणहिंसक ब्राह्मण, काष्ठमुख पक्षी और नगरमें अपसरजीव। इन चारोंने अपनी साधुता का वेष धारण किया और विश्वासघात किया इसलिये :—

कोतवाल साहब, आप धैर्य रखिये। संध्या

होनेपर ब्राह्मण सींकेमें बैठे हुए तपस्वीके पास गया। तपस्वीके सेवकोंने ब्राह्मणको वहां आनेसे रोका लेकिन ब्राह्मण अन्धा बनकर वहीं गिर पड़ा और कहने लगा मैं गरीब ब्राह्मण अन्धा हूँ सवेरे चला जाऊंगा। तपस्वीके सेवकोंने आंखोंके पास तिनका वगैरह ले जाकर अन्धेकी परीक्षा की। देखनेपर भी उसने कहा कि मुझे कुछ नहीं दिखाई देता है।

रात हो जानेपर उन्होंने अपना दैनिक कर्म प्रारम्भ कर दिया। चुराकर लाया हुआ धन रात में, एक गुफाके गहरे कुएमें रखते हुए ब्राह्मणने देख लिया। तापसके स्त्री पुत्रादिको भी भोजनादि करते हुए देख लिया।

प्रभात होनेपर ब्राह्मण भिक्षुने कोतवालसे सब समाचार कहे और कोतवालने राजासे। बाद में राजाने तपस्वी चोर और उनके सेवकोंको बहुत धमकाया। तपस्वीको प्राणदण्ड और दूसरोंको कारावासका दण्ड दे दिया। अन्तमें वे मरकर नरकोंकी यातना भोगते रहे।

अब्रह्मचर्य्यमें आरक्षक

यमदण्ड

आहीर देशके नाशिका नगरमें राजा कनक-रथ और रानी कनकमाला रहती थी। यमदण्ड नामक कोतवालकी युवती माता बहुसुन्दरी व्य-भिचारिणी थी। एक दिन यमदण्डकी स्त्रीने अपने आभूषण अपनी सासको रखनेके लिये दिये। समय पाकर बहुसुन्दरी रातमें आभूषण लेकर अपने यारको देनेके लिये संकेतित स्थानपर जा रही थी। यमदण्ड भी उसे व्यभिचारिणी समझ कर उसके पीछे पीछे हो चला। जहां बहुसुन्दरी गई, वहीं यमदण्ड भी जा पहुंचा। दोनोंने आपसमें एक दूसरेको नहीं पहिचाना। बहुसुन्दरीने अपना यार समझ कर यमदण्डको सब आभूषण दे दिये और परस्पर कामासक्त हो गये। यमदण्डने आभूषण घर आकर अपनी पत्नीको दे दिये। इससे उसकी स्त्रीको बहुत आश्चर्य हुआ कि मैंने यह आभूषण तो सासको दिये थे, इनके हाथ कैसे लगे ?

स्त्रीके यह वचन सुनकर यमदण्डको मालूम हुआ कि आज मैंने अपनी माताके साथ ही व्यभिचार सेवन किया है। इसके बाद यमदण्ड वहीं जाकर अपनी मांके साथ सदा कुकर्म किया करता था पीछे उन दोनोंमें बहुत अनुराग बढ़ गया।

एक दिन यमदण्डकी स्त्रीको यह सब सहन नहीं हुआ तो उसने रुष्ट होकर रजकीसे कह दिया कि मेरा पति अपनी माताके साथ कुकर्म करता है।

रजकीने मालिनसे कह दिया। विश्वास पात्र मालिन कनकमाला रानीके लिये पुष्प लेकर गई थी उसने वहां बात बातमें कह दिया कि रानीजी, आपने कोई नई बात सुनी है? रानी कुतूहल पूर्वक बोली कौनसी बात? मालिनने कहा कि यमदण्ड अपनी माताके साथ विषय सेवन करता है। रानीको सहसा विश्वास नहीं हुआ। फिर अन्य कोतवालोंसे निश्चय करा कर यमदण्डको बुलाया और उसे प्राण दण्ड दिया। उसने मरकर दुर्गति प्राप्त की।

धिक्कार है ऐसे काम सेवनको जो अपने आप को भुलाकर माँ, बहिन और बहू बेटियोंके साथ

भी अन्याय करनेमें नहीं हिचकता। इससे उभय-लोकमें दुःख उठाना पड़ता है।

परिग्रहमें श्मश्रुनवनीत

अयोध्यामें नगर सेठ भवदत्त उसकी स्त्री धनदत्ता और पुत्र लुब्धदत्त रहता था। वह व्यापार के लिये दूर गया हुआ था। वहां कमाया हुआ धन चोरोंने चुरा लिया। वह निर्धन हो गया। एक दिन उसने आते समय एक ग्वालेसे छाछ पीनेके लिये मांगा। छाछ पीते समय मूंछोंमें थोड़ा नवनीत-नैनू लग गया। उसने सोचा कि इस नवनीतसे व्यापार करूंगा। इस तरह इसका सार्थक नाम श्मश्रुनवनीत पड़ गया।

इस प्रकार करते २ इसके पास बहुत नैनू हो गया। घीका बर्तन अपने पांवोंके पास रख लिया। शीतकालमें अपनी झोपड़ीके दरवाजेके पास आग और पांवोंके पास घी रखकर रातमें बिस्तरपर लेट गया। पड़े पड़े सोचता है कि इस घीसे बहुत धनिक हो जाऊंगा। धीरे धीरे सामन्त, महा-

सामन्त राजा और महाराजा बन जाऊंगा तथा चक्रवर्ती भी होऊंगा। जब सतखण्डे महलपर बिस्तरपर लेटे हुए अपने पासमें बैठी हुई स्त्री पांव दबाना प्रारम्भ करेगी तो बहुत प्रेमसे स्त्री रत्नको भी लात मार दूंगा। ऐसा विचार करते हुये अपनेको चक्रवर्त्ती समझ कर लात मारी इससे घीका वर्तन गिर गया और झोपड़ीमें आग सिलग गई और वह झोपड़ीसे बाहर नहीं निकल सका पश्चात् जलकर मरनेपर नरकमें गया।

आहारदानमें श्रीषेण

मलयदेशके रत्नसंचयपुरमें राजा श्रेणिक, रानी सिंहनन्दिता और दूसरी अनिन्दिता रहती थीं। सिंहनन्दिताके पुत्रका नाम उपेन्द्र था। उसी में सात्यकि नामक ब्राह्मण, जम्बू नामक ब्राह्मणी और सत्यभामा नामक पुत्री रहती थी।

पाटलिपुत्र नगरमें ब्राह्मण रुद्रभट्ट बालकोंको वेद पढ़ाता था। उसकी दासीका पुत्र अधिक बुद्धिमान होनेके कारण कपट वेषमें वेद पढ़कर

बहुत विद्वान हो गया। उसे रुद्रभट्टने कुपित होकर पाटलिपुत्र नगरसे बाहर निकाल दिया।

वह उत्तम वस्त्र तथा यज्ञोपवीत धारण कर ब्राह्मणके वेषमें रत्नसंचयपुर गया।

सात्यकिने दासी पुत्र ब्राह्मण वेषधारीको वेदका पण्डित और रूपवान देखकर सत्यभामाके योग्य समझकर उससे विवाह कर दिया।

सत्यभामाने रतिकालमें अशुभ चेष्टा करते देख मालूम कर लिया कि यह कुलीन नहीं है इसलिये वह सदा बहुत उदास रहने लगी।

कुछ दिनों बाद रुद्रभट्ट तीर्थ यात्रा करता हुआ रत्नसंचयपुरमें आया। उनको कपिलने प्रणाम कर अपने स्वच्छ घरमें ले जाकर अन्नवस्त्रादिसे सत्कार किया और सत्यभामा तथा सब लोगोंसे "यह मेरा पिता है" कह दिया।

सत्यभामाने एक दिन रुद्रभट्टको बहुत स्वादिष्ट भोजन कराया और बहुत स्वर्ण दिया। फिर चरणोंको पकड़कर पूछने लगी कि हे पिता! कपिलमें तुम्हारे गुण शीलका अंश भी नहीं है इसलिये यह आपका पुत्र है या नहीं? सच बतलाने की कृपा कीजिये। उसने कहा, यह दासीका पुत्र है।

यह सुनकर वह कपिलसे विरक्त हो गई तथा वह मुझसे हठात् काम सेवन आदि करेगा ऐसा विचार कर सिंहनन्दिता महारानीकी शरणमें चली गई। महारानीने उसे पुत्रीके समान रखा। इस प्रकार एक दिन श्रीषेण राजाने परम भक्तिसे विधिपूर्वक चारणमुनि अर्ककीर्त्ति और अमित-गतिको दान दिया। इससे राजाके रानी भी साथ भोगभूमिमें उत्पन्न हुई। इनकी अनुमोदनासे सत्यभामाने भी वहीं जन्म लिया।

राजा श्रीषेण दानके माहात्म्यके कारण पर-म्परासे शान्तिनाथ तीर्थंकर हुये।

पात्रदान करनेसे समस्त सुख प्राप्त होते हैं इसलिये पात्रदान अवश्य करना चाहिये।

(औषधि दानमें)

वृषभसेना

जनपद देशके कावेरीनगरमें राजा उग्रसेन, सेठ धनपति, सेठानी धनश्री पुत्री वृषभसेना और उसकी धाय रूपवती नाम की थी।

एक दिन वृषभसेना स्नान कर रही थी। स्नानका पानी जिस गड्ढेमें जा रहा था उसमें एक रोगी कुत्ता जाकर गिर पड़ा। उसमेंसे निकलते ही कुत्ता नीरोग हो गया। धात्री धायने सोचा कि पुत्रीके स्नान जलसे ही कुत्ता नीरोग हुआ है।

इसके बाद धायने अपनी माताकी बारह वर्ष से बिगड़ी हुई आंखें उसी स्नान जलसे धोईं। इससे दोनों आंखें खुल गईं। नगरमें यह प्रसिद्ध हो गई कि रूपवती धाय समस्त रोगोंके दूर करने में बहुत कुशल है।

एक बार उग्रसेन राजाने बहुत सेना सहित रणपिंगल मन्त्रीको मेघपिंगलके पास भेजा। वह ऐसे देशमें आया जहांका पानी विषैला था उससे रणपिंगलको बुखार आ गया। रणपिंगल वापिस आया। रूपवतीने उसी स्नान जलसे नीरोग बना दिया। राजा उग्रसेनने भी क्रोधसे वहां पहुंच कर और ज्वरसे पीड़ित वापिस आये हुये रणपिंगलसे जलका वृत्तान्त सुनकर वह जल मंगवाया।

सेठानी धनश्रीने मन्त्रीसे कहा कि सेठजी! राजाके सिरपर पुत्रीके स्नानका जल क्यों डालते

हो ? सेठने कहा कि यदि राजा जलका स्वभाव जानना चाहते हैं तो इसमें कोई दोष नहीं है। ऐसा कहने पर रूपवतीने उस जलसे राजा उग्रसेनको नीरोग कर दिया। तब राजाने रूपवतीसे जलका माहात्म्य मालूम किया। उसने सत्य ही कहा। फिर सेठ बुलाया गया। वह डरते हुये राजाके पास आया।

राजाने अभिमान पूर्वक वृषभसेनासे विवाह करनेकी याचना की। तब सेठने कहा कि यदि आप जिनेन्द्र भगवानकी अष्टान्हिका पूजन किया करें, पिंजरोंमें रोके हुये पक्षियोंको छोड़ दें और जेलमेंके सब मनुष्योंको छोड़ दें तो मैं अपनी कन्या वृषभसेनाके साथ विवाह करनेके लिये तैयार हूँ। राजा उग्रसेनने सब स्वीकार किया और वृषभसेनाको पट्टरानी बना लिया। राजा प्राणोंसे भी प्यारी वृषभसेनाके साथ आमोद प्रमोद करने लगे और सबको बन्धनसे मुक्त कर दिया। विवाह कालमें भी बनारसके बहुत प्रचण्ड पृथिवीचन्द्र नामक राजाको बन्धन मुक्त नहीं किया। इसलिये बनारसकी रानी नारायणदत्ताने मन्त्रियोंसे सलाह कर पृथिवीचन्द्रको छुड़ानेके लिये बनारसमें सर्वत्र

वृषभसेना रानीके नामसे दानशालायें स्थापित कर दीं। उनमें ब्राह्मणोंको भोजन कराया जाता था। उनमें जो भोजन कर कावेरीनगर गये उनसे यह समाचार सुनकर रूपवती धाय बहुत क्रुद्ध हुई कि वृषभसेना! तुमने मुझसे बिना पूछे बनारसमें ये दानशालायें क्यों खोलीं? वृषभसेनाने कहा, यह काम मैंने नहीं किया किन्तु मेरे नामसे किसीने किसी कारणवश ऐसा किया होगा इसलिये तुम दूत भेजकर खोज करो। यथार्थ बात मालूम कर रूपवतीने वृषभसेनासे कहा और रानीने यह वृत्तान्त राजासे कहा। पश्चात् पृथिवीचन्द्र राजा शीघ्र ही बन्धन मुक्त कर दिया गया।

राजा पृथिवीचन्द्रने चित्रफलक—सुन्दर वृक्षके पाटिये पर रानी वृषभसेना और राजा उग्रसेनके चित्र बनाये तथा उन दोनोंके चरणोंमें प्रणाम करता हुआ अपना चित्र बनाया। वह सचित्र पाटिया दोनोंको समर्पण कर दिया गया। रानी वृषभसेनासे कहा कि आप हमारी माता हैं आपने मेरा यह जन्म सफल किया है। तब उग्रसेनने पृथिवीचन्द्रका सन्मान कर कहा कि तुम मेघपिंगलके पास जाओ ऐसा कह कर दोनोंको बनारस भेज दिया।

मेघपिंगल भी यह सुनकर कि पृथ्वीचन्द्र मेरा शत्रु था और राजा उग्रसेनका सेवक बनकर सामन्त बन गया है। इससे राजा उग्रसेनके पास राजाओंने प्रसन्न होकर भेंट चढ़ाई। भेंटमें जो कुछ भी आया उसमेंका आधा वृषभसेनाको और आधा मेघपिंगलको दे दिया। एक बार एक एक रत्न और कम्बल आये तो उनपर नाम लिखाकर उन दोनोंको दे दिये गये।

एक दिन जब मेघपिंगलकी रानी विजया मेघपिंगलके कम्बलको ओढ़कर रूपवतीके पास गई तो वहां कम्बल बदल गया। कुछ दिनों बाद वृषभ-सेनाके कम्बलको ओढ़कर मेघपिंगल राजा उग्रसेन की सभामें गया तब उसे देखकर राजा लाल पीली आंखें करने लगा। मेघपिंगल भी अपने ऊपर राजाको कुपित देखकर दूर हट गया। राजाने यह समझा कि दोनोंके कम्बलों पर नाम लिखा कर दिया गया था तब वृषभसेनाका कम्बल इसके पास क्यों आया इस कारण क्रुद्ध होकर उसने रानी वृषभसेनाको समुद्रमें फेंक दिया। तब उसने प्रतिज्ञा की "कि यदि समुद्रसे मेरा उद्धार हो जावेगा तो तपस्या करने लगूंगी।"

व्रतके प्रतापसे जलदेवताने सिंहासनादि प्रातिहार्य दिये। यह सुनकर राजाको पश्चात्ताप हुआ और रानीको लेने गया।

आते समय वनमें गुणधर नामक अवधिज्ञानी के दर्शन हुये। उनको वृषभसेनाने प्रणाम कर अपने पूर्वभवोंका हाल पूछा। मुनि महाराजने कहा—पूर्वभवमें तू यहीं नागश्री नामक ब्राह्मण पुत्री थी। तूने मुनियोंका आदर सत्कार किया था, उनकी पीड़ाशान्तिके लिये औषधि दान दिया था वैयावृत्ति की थी। इसलिये तू निदान पूर्वक मरणकर यहां धनपति सेठके यहां धनश्रीकी पुत्री हुई हो। औषधदानके फलसे सर्वौषध ऋद्धि वाला शरीर प्राप्त किया है। मुनियोंपर कूड़ा कचड़ा फेंकनेसे तुमपर कलङ्क लगाया गया। यह सुनकर आत्मीय कुटुम्बियोंका परित्याग कर वृषभसेनाने गुणधर मुनिसे आर्यिकाकी दीक्षा ले ली।

श्रुतदानमें कौन्डेश

कुरुमणि नामक ग्राममें गोविन्द नामक ग्वाल रहता था। उसने वृक्षके कोटर-खोहमेंसे बहुत समयसे रखे हुए शास्त्रको, पूजन भक्ति कर पद्मनन्दि मुनिको दिया था। इस शास्त्रसे पूर्व आचार्य पूजाकर व्याख्यान किया करते थे। वे खोहमें रखकर चले गये थे। गोविन्द बालकपनसे प्रतिदिन वृक्षकी और शास्त्रकी भक्ति पूर्वक पूजा किया करता था। गोविन्द निदान पूर्वक मरण कर उसी ग्रामकूटका पुत्र हुआ। उसे ही पद्मनन्दि मुनिको देखकर जाति स्मरण हो गया। तप ग्रहण कर कौण्डेश नामक महा मुनि हुआ वही पीछे श्रुतकेवली हुए।

बसतिदानमें सूकर

मालवा देशके घटग्राममें कुम्हार देविल और नाई धमिल्ल रहता था। उन दोनोंने पथिकोंके

ठहरनेके लिये मकान अर्थात् धर्मशाला बनवाई थी। एक बार देविल मुनिको उसमें ठहरा गया था और धमिल्लने उनको बाहर निकाल कर ढोंगी साधुको ठहरा दिया। धमिल्ल और ढोंगी साधु द्वारा निकाले गये मुनि महाराज रात्रिमें वृक्षके नीचे कायोत्सर्ग पूर्वक दंशमशक और शीत परीषह सहन कर रहे थे।

प्रातःकाल होनेपर देविल और धमिल्लमें झगड़ा होने लगा। दोनों मरकर क्रमसे सूकर और व्याघ्र हुये।

एक बार जब सूकर गुहामें बैठा हुआ था उस समय समाधि गुप्त और त्रिगुप्त मुनि गुहामें आकर ठहर गये। उनको देखकर देविलके जीव सूकरको जाति स्मरण हो गया तथा उसने धर्म श्रवणकर व्रत ग्रहण कर लिया।

कुछ देर बाद मनुष्यकी गन्धको जान कर मुनियोंके भक्षण करनेके लिये वह व्याघ्र भी गुहा के पास आ गया। सूकर उन मुनियोंकी रक्षाके लिये गुहाके द्वारपर खड़ा हो गया। वहां भी व्याघ्र और सूअरमें लड़ाई हो गई और दोनों मर गये।
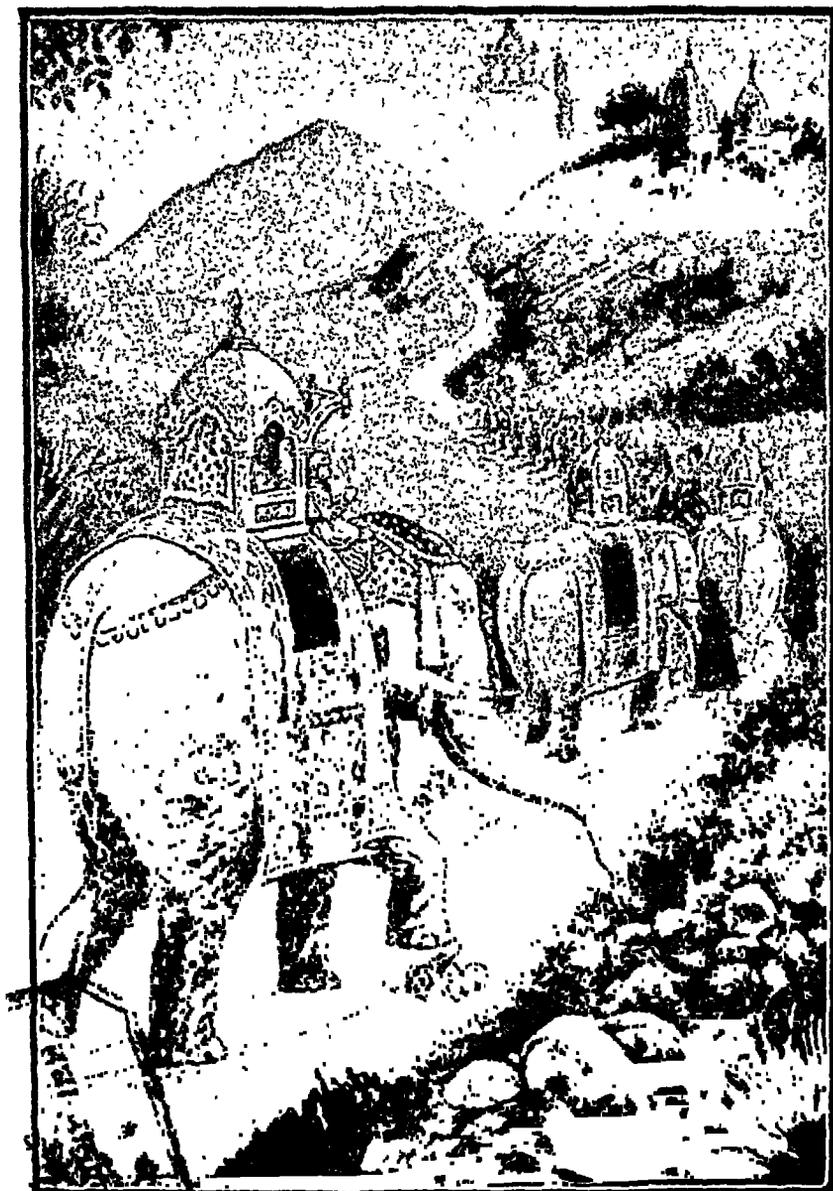
भक्तिवश मेढ़क हाथीके नीचे दबकर स्वर्ग प्राप्त किया

मुनि रक्षाके अभिप्रायसे मरण हो जानेपर सुअर सौधर्म स्वर्गमें महर्द्धिक देव हुआ और व्याघ्र मुनि-भक्षणके अभिप्रायसे मरकर नरकमें गया।

(पूजाके माहात्म्यमें)

मेंढक

मगधदेशके राजगृहनगरमें राजा श्रेणिक, सेठ नागदत्त और सेठानी भवदत्ता रहती थीं।

सेठ नागदत्त सदा मायाचारी किया करता था इसलिये मरकर अपने ही आङ्गनकी बावड़ीमें मेंढक उत्पन्न हुआ। वहां आई हुई सेठानीको देख कर मेंढकको जातिस्मरण हो गया और उसके पास आकर कूदकर ऊपर चढ़ गया। मेंढक बार बार सेठानीने सोचा कि हटाये जाने पर भी फिर २ आकर चढ़ जाता था, इसलिये यह मेरा कोई इष्ट होगा। ऐसा निश्चय कर अवधिज्ञानी सुव्रतमुनिसे पूछा। मुनिसे सब वृत्तान्त कह सुनकर उसने उसे बहुत गौरवसे घरमें रक्खा।

एक दिन वैभार पर्वत पर वर्धमान स्वामी पधारे हुये थे। यह सुन कर श्रेणिक महाराजने नगरमें आनन्द भेरी बजवा दी और स्वयं बन्दनाको गये। सेठानी भी गृहजनोंके साथ बन्दना-भक्तिके लिये गई। वह मेंढक भी आङ्गनकी बावड़ीके कमलको पूजाके लिये लेकर हाथीके पांवसे कुचला जाकर मर गया और पूजाके अनुराग संचित पुण्य के प्रभावसे सौधर्म स्वर्गमें महर्द्धिक देव हुआ।

देवने अवधिज्ञानसे पूर्वभवका वृत्तान्त जान कर अपने मुकुटके अग्रभागमें मेंढकका चिह्न बना लिया और उसे वर्धमान स्वामीकी बन्दना करते हुए राजा श्रेणिकने भी देखा। तब राजा श्रेणिकने मेंढकके चिन्ह होनेका कारण गौतम स्वामीसे पूछा। उन्होंने सब वृत्तान्त सुना दिया। यह सुनकर समस्त भव्य पुरुष पवित्र भावोंसे पूजन करनेमें उद्यत हो गये।